इकाई 11 सैन्यवाद का उदय

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 शासन का चरित्र

11.3 सेना एवं सरकार

11.4 राजनीतिक दलों के साथ सेना की नाराज़गी

11.5 शिक्षा एवं राष्ट्रवाद

11.6 विचारों एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कुठाराघात

11.6.1 सेना का विरोध

11.6.2 1930 के बाद के अधिनियम

11.7 सेना के अंदर विभाजन

11.8 सेना की तानाशाही

11.9 युद्ध और आर्थिक नीतियाँ

11.10 युद्ध एवं सेना का व्यवहार

11.11 सारांश

11.12 शब्दावली

11.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपको जानकारी हो सकेगी :

- 1930 के बाद जापान में सैन्यवाद के उदय के बारे में,
- सेना की शक्ति बढ़ाने में शिक्षा एवं देशभक्त संगठनों की भूमिका के बारे में,
- उन साधनों एवं विधियों के विषय में जिनके द्वारा सेना ने राज्य के मामलों का संचालन किया, और
- स्वयं सेना के अंदर होने वाले संघर्षों के विषय में।

11.1 प्रस्तावना

प्रशान्त महासागरीय युद्ध प्रारंभ होने के ठीक पहले के दशक (1931-1941) तक के समय को जापानियों के द्वारा ''कूराई जनिमा'' (अंधेरी घाटी) कहकर उद्धृत किया गया है। यही वह समय था जबकि जापान में ''सैन्यवाद'' एवं ''उग्र राष्ट्रवाद'' का अभूतपूर्व तौर पर उदय हुआ।

इसी समय के दौरान सेना ने राजनीति, अर्थव्यवस्था एवं विदेशी संबंधों के क्षेत्र में अपनी सर्वोच्चता को स्थापित किया। इस समय के शासन के चरित्र की जाँच-पड़ताल से इस इकाई का प्रारंभ किया गया है। इस इकाई में सैन्यवाद के उदय के कारणों के साथ-साथ

इस संदर्भ में देश भक्त संगठनों एवं साहित्य द्वारा किए गए योगदान का विवेचन किया गया है। इस इकाई में सैन्यवाद के अधीन परिस्थितियों तथा सेना के अंदर विभाजन की भी विवेचना की गई है। अंत में, युद्ध के दौरान की आर्थिक नीतियों तथा युद्ध के प्रति सेना के दृष्टिकोण का भी उल्लेख किया गया है।

11.2 शासन का चरित्र

जापान में इस दौरान (1930 के दशक एवं 1940 के दशक) जो शासक वर्ग सत्ता में था उसके चरित्र को लेकर विद्वानों के बीच काफी बहस हो चुकी है। जिस प्रश्न के इर्द-गिर्द बहस होती है, वह यह है कि क्या यह शासन फासीवादी या फिर सैन्यवादी था? पहले हम इन दोनों व्यवस्थाओं की विशेषताओं का संक्षेप में विवरण प्रस्तुत करेंगे :

i) फासीवाद की निम्नलिखित मुख्य विशेषताएँ हैं :

- ऐसा राष्ट्रवाद जो जनता के एक समूह की नैसर्गिक सर्वोच्चता पर आधारित होता है,
- कड़ा अनुशासनबद्ध तानाशाहीपूर्ण राजनीतिक राज्य; और
- एक नेता ही राज्य का प्रतीक होता है।

ii) सैन्यवाद से तात्पर्य उस राज्य से है :

- जिस राज्य के अंतर्गत सेना देश के प्रशासन में निर्णायक भूमिका अदा करती है,
- जिसके अंतर्गत आर्थिक एक राजनीतिक नीतियों की मुख्य निर्माता सेना ही होती है, और
- जहाँ सेना के अधीन विदेशी संबंधों में एक आक्रामक एवं प्रसारवादी नीति का अनुसरण किया जाता है।

फासीवादी राज्य का सबसे अच्छा उदाहरण 1922-1945 के मध्य बेनितो मुसोलिनी के अधीन इटली और एडोल्फ हिटलर के अधीन जर्मनी का दिया जा सकता है। कुछ विद्वानों ने जापान को इन दोनों फासीवादी राज्यों के अनुरूप ही माना है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस समय जापान में भी फासीवाद की प्रवृत्तियाँ मौजूद थीं और जो निम्न प्रकार से हैं:

- विदेशी संबंधों में आक्रामकता,
- अन्य एशियाई देशों से ऊपर सर्वोच्चता की भावना, और
- घरेलू मामलों में विरोध-दमन की नीति।

लेकिन जापान का मामला इन दोनों यूरोपीय देशों से अलग था। जापान में कोई सैनिक क्रांति नहीं हुई थी। परंतु इटली में 1922 में सत्ता को पलट दिया गया था और 1933 में जर्मनी में हिटलर के द्वारा ऐसा किया गया। जापान में जर्मनी की नाजी पार्टी की भांति कोई जन आधार वाला फासीवादी दल नहीं था। न ही जापान में हिटलर या मुसोलिनी की तरह का कोई ऐसा नेता था, जिसका राजनीतिक वातावरण पर पूर्णरूपेण वर्चस्व कायम हो गया था। सेना एकमात्र ऐसा संगठन था, जिसके पास व्यापक एवं निर्णायक शक्तियाँ थीं। यद्यपि राज्य का सर्वोच्च पदाधिकारी सम्राट था, लेकिन वास्तविक शक्तियाँ सेना के पास ही थीं। फिर भी सेना ने सम्राट के सम्मान को पुनर्स्थापित करने के लिए कड़ा संघर्ष किया। जापान के संदर्भ में यह कहना उचित होगा कि राज्य का शासन सैन्यवाद के द्वारा संचालित किया गया। यहाँ पर यह उद्धृत करना भी उचित है कि समाज के एक बड़े भाग का जापान की

एक ''विशिष्टता'' में विश्वास था और ऐसा सोचने वाले लोग नौकरशाही, कृषि वर्गों, सैन्यवादियों, एशियाई स्वतंत्रतावादी, ''राष्ट्रीय समाजवादी'', बड़े नेतागण तथा विद्वानों में थे। राष्ट्रवादी भावनाओं ने जापानी जनता को अति जागरूक बनाया। यद्यपि जापान ने पश्चिमी तरीकों के आधार पर आधुनिकीकरण के मार्ग को अपनाया, फिर भी जापान ने राजतंत्र, कन्फ्यूशियसवादी नैतिक मूल्यों तथा सेवा की सामुराइ परंपरा जैसे अपने समाज के मौलिक पक्षों को बनाए रखा।

जनता की राष्ट्रवादी भावनाओं ने 1930 के दशक में उग्रवादी स्वरूप अर्थात् ''उग्र-राष्ट्रवाद'' का रूप धारण कर लिया। 1930 तथा 1940 के प्रारंभिक वर्षों में सैनिक नेताओं ने जनता को राजनीतिक तथा व्यापारिक नेताओं के प्रभाव से मुक्त कराने एवं सम्राट के सम्मान को पुनर्स्थापित करने के कार्य को अपने हाथ में ले लिया। सैनिक नेताओं ने महसूस किया कि राजनीतिक एवं व्यापारिक नेताओं ने समाज के ''जापानीवाद'' को संशय में डाल दिया था।

11.3 सेना एवं सरकार

मेजी शासन के प्रारंभ से ही सेना राज्य के मामलों एवं प्रशासन में विशेष स्थान रखती थी। सैनिक नेताओं ने सरकार के निर्णय करने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। वास्तविकता यह है कि 1885 से 1945 तक लगभग आधे प्रधानमंत्री सैनिक नेता रह चुके थे। इसी के साथ-साथ अक्सर सेना के बड़े अधिकारी, गृहमंत्री एवं विदेश मंत्री जैसे महत्वपूर्ण पदों पर भी रहे। किसी बहुमत प्राप्त राजनीतिक दल के द्वारा मंत्रिमंडल का गठन कर लिए जाने पर भी सैनिक मंत्रालय पर किसी न किसी तरह से सेना के बड़े अधिकारी का ही नियंत्रण रहता था।

1889 में लागू किए गए मेजी संविधान में एक ऐसी संसदात्मक सरकार की व्यवस्था की गई थी, जिसके अंतर्गत डायट में निर्वाचित प्रतिनिधिगण सरकारी निर्णयों में भाग लेते थे। लेकिन वे निर्णायक भूमिका अदा नहीं कर पाते थे क्योंकि सम्राट के पास व्यापक शक्तियाँ थी। ऐसे सभी कार्यपालिका अंग जो सम्राट के लिए कार्य करते थे, डायट की अनुमति के बगैर उनको लागू कर सकते थे और डायट का सेना पर भी कोई नियंत्रण न था। इस संदर्भ में संविधान की धारा XI को उद्धृत किया जा सकता है : ''सम्राट सेना एवं नौसेना का सर्वोच्च अधिकारी है,'' और धारा XII के अनुसार, ''सम्राट सेना तथा नौसेना की सहमति के साथ संगठन एवं शांति को सुनिश्चित करता है।''

इस तरह से सम्राट के सर्वोच्च अधिकारी होने के कारण उसको सेना एवं नौसेना के अधिकारियों के द्वारा सलाह दी जाती थी। सेना के अधिकारीगण ऐसी नीतियों का निर्माण एवं लागू कर सकते थे, जिन पर सरकार की अनुमति लेना आवश्यक न था। न ही उनके लिए यह आवश्यक था कि अपने निर्णयों के लिए सरकार को सूचित तक करें। ऐसा संविधान की धारा VIII के कारण था क्योंकि उसमें कहा गया था, ''सेना के गुप्त एवं नियंत्रण संबंधी मामलों को सेना का मुख्य सेनापति प्रत्यक्ष तौर पर सम्राट को सूचित करता था और सेना तथा नौसेना का मंत्री उन्हीं मामलों की सूचना प्रधानमंत्री को दे सकता था, जिनकी सूचना सम्राट मंत्रिमंडल को देता था।''

हम पहले भी उद्धृत कर चुके हैं कि केवल सैनिक अधिकारी ही रक्षा मंत्रालय का मंत्री बन सकता था। परिणामस्वरूप सेना ऐसी किसी भी सरकार को गिरा सकती थी जो इसे स्वीकार्य न थी। सरकार को गिराने का काम सेना ने अपने किसी अधिकारी द्वारा त्यागपत्र दिलवाकर या किसी पद के लिए कोई अधिकारी न नियुक्त करके करती थी। जैसा कि हम अगले भागों में देखेंगे कि सेना ने अपनी इस शक्ति का प्रयोग अपने लाभ के लिए किया।

11.4 राजनीतिक दलों के साथ सेना की नाराजगी

जेनरो या बड़े राजनेताओं ने मेजी शासन के पुनर्स्थापन तथा देश के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान किया था। उनको समाज में ऐसा विशेष स्थान प्राप्त था, जो सरकार एवं सेना दोनों से उच्च था। **जेनरो** का सम्राट के साथ प्रत्यक्ष संपर्क था और सम्राट अक्सर उनके विचारों का अनुसरण करता था। जब तक बड़े राजनेता जीवित रहे, तब तक नागरिक एवं सैनिक नीतियों के बीच कम से कम टकराव हुआ। लेकिन 1922 तक अधिकतर बड़े नेतागणों की मृत्यु हो चुकी थी या जो कुछ जीवित बचे उन्होंने राजनीति से संन्यास ले लिया था। इस समय तक राजनीतिक दलों का राजनीति में दबदबा कायम हो चुका था और अब राजनीतिक दलों तथा सेना के मध्य होने वाला संघर्ष काफी गंभीर हो गया था।

राजनीतिक दलों ने प्रथम विश्व युद्ध के बाद जिन सरकारों का गठन किया, उनके द्वारा किए गए कार्यों से सेना काफी नाराज़ थी। सेना ने राजनीतिक दलों के उस दृष्टिकोण का विरोध किया, जिसके अनुसार उन्होंने सेना के बजट में बढ़ोत्तरी एवं सैनिक डिवीज़नों के प्रसार का विरोध किया। उदाहरण के रूप में, प्रधानमंत्री कातो तक्काकी की सरकार ने सेना की 21 डिवीज़नों में कमी करके उनको 17 कर दिया। राजनीतिक दलों की चीन के प्रति जो नीति थी, उसको लेकर भी सेना नाराज़ थी। 4 फरवरी 1922 को चीन तथा जापान के बीच जो आपसी समझौता हुआ उसके अनुसार चीन को शांतुंग प्रदेश की संप्रभुता वापस लौटा दी गई और उस क्षेत्र में जापान के आर्थिक विशेषाधिकारों को मान्यता प्रदान कर दी गई। तभी से चीन के प्रति संचालित होने वाली जापानी नीति का मुख्य लक्ष्य सैन्य प्रसार के स्थान पर आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करना हो गया। इस नीति को ''नरम'' चीन नीति का नाम दिया गया तथा यह नीति प्रधानमंत्री शिदेहारा किजूरो की नीति थी, जो जून 1924 से अप्रैल 1927 तथा पुनः जुलाई 1929 से दिसम्बर 1931 तक जापान का प्रधानमंत्री रहा।

सेना चीन के प्रति नरम नीति की कटु आलोचक थी, क्योंकि जापान ने मुख्य भूमि पर जो उपलब्धियाँ प्राप्त की थी उनको साम्राज्यवाद विरोधी आंदोलन के उफान से भारी जोखिम पैदा हो गया था। यह आंदोलन गुओमिंदांग (Guomingdang) दल के नेता शोक के नेतृत्व में और अधिक शक्तिशाली होता जा रहा था। उसने जापान सहित सभी समझौतों के पुनरावलोकन की माँग की और दक्षिण मंचूरिया में जापान की प्रमुख भूमिका के जारी रहने पर भी प्रश्न उठाए।

राजनीतिक दलों ने भी व्यापारिक घरानों (**जैबात्सू**) के साथ उनके घनिष्ठ संबंध की आलोचना की। किसानों ने विशेष रूप से यह विश्वास किया कि राजनीतिक दलों के प्रभुत्व वाली सरकारों ने **जैबात्सू** के हितों की रक्षा की और कृषि की अपेक्षा व्यापार एवं उद्योग को अधिक महत्व दिया। इस संदर्भ में कोरिया एवं ताइवान से आयात किए जाने वाले सस्ते चावल का उदाहरण दिया जा सकता है क्योंकि इस व्यापार से व्यापारियों को लाभ हुआ और इसने किसानों की आमदनी पर विपरीत प्रभाव डाला। व्यापारिक घरानों के साथ-साथ राजनीतिक दलों पर भी भ्रष्टाचार के आरोप लगाए गए। विदेशी विचारों के आगमन के लिए भी राजनीतिक दलों को जिम्मेदार ठहराया गया, क्योंकि इन विचारधाराओं को सम्राट के प्रभुत्व के लिए खतरनाक समझा गया। राजनीतिक दलों के विरुद्ध व्याप्त इस तरह की भावनाओं का लाभ सेना ने उठाया। इस पृष्ठभूमि में नौसेना ने उस लंदन नौसेना संधि (1930) का कड़ा विरोध किया, जिसमें हथियारों में कटौती का आह्वान किया गया था। लेकिन उस समय के प्रधानमंत्री हामागुशियाको ने इसे डायट से पारित कराने में सफलता प्राप्त कर ली थी। सरकार की कड़ी आलोचना की गई और टोकियो में हिंसात्मक विरोध

हुआ। बाद में हामागुशि की हत्या कर दी गई। अंतिम प्रधानमंत्री इनूकाय त्सूयोशि भी सेना में लोकप्रिय न था और सेना ने मंचूरिया में जो सैनिक कार्यवाही की उसके विषय में सेना के अधिकारियों ने सरकार को सूचित तक करना आवश्यक न समझा। इनूकाय ने सैन्य प्रसार का विरोध किया और सेना में अनुशासन कायम करने का आह्वान किया। मई 1932 में छोटे सैनिक अधिकारियों के द्वारा उसका भी वध कर दिया गया। इसी के साथ जापान में राजनीतिक दलों की सरकार के काल का अंत हो गया।

हमें यहाँ पर यह उद्धृत करना होगा कि जापान में सैन्यवाद ने उग्र राष्ट्रवाद की भावनाओं के कारण गति पकड़ी। ये उग्र राष्ट्रवाद की भावनाएँ जापान में काफी पहले से उत्पन्न हो चुकी थी। इन भावनाओं के विकास में निश्चय ही कुछ अन्य कारकों ने अपनी भूमिका अदा की।

बोध प्रश्न 1

1) फासीवाद एवं सैन्यवाद की विशेषताएँ बताइए। 1930 तथा 1940 के दशकों में जापान को आप इनके बीच कहाँ पर रखेंगे?

....

....

....

....

....

2) सेना की राजनीतिक दलों के प्रति शत्रुता क्यों थी?

....

....

....

....

....

11.5 शिक्षा एवं राष्ट्रवाद

जनता के मस्तिष्क में राष्ट्रवादी भावनाओं को जगाने के लिए जापान ने शिक्षा का एक सशक्त माध्यम के रूप में प्रयोग किया। मेजी शासन के दौरान जिस शिक्षा व्यवस्था को लागू किया गया, उसकी प्रेरणा जर्मनी से ली गई थी। जापानियों का जर्मनी की भांति विचार था कि, ''युद्धों को कक्षा कमरों में जीता जा सकता है।''

प्राथमिक स्कूलों को राष्ट्रवादी विचारों का बीजारोपण करने के लिए सबसे अधिक उर्वरक समझा गया। मेजी शासन के प्रारंभिक समय में शिक्षा व्यवस्था के प्रारूप को तैयार करने में सबसे महत्वपूर्ण योगदान मोरू ऐरिनोनी का था और उसने एक बार कहा कि :

''सभी स्कूलों के प्रशासन को संचालित करते समय मस्तिष्क में यह रोपित किया जाना चाहिए कि जो कुछ भी किया जाता है, वह विद्यार्थियों के लिए नहीं बल्कि देश के लिए किया जाना है।''

एक अन्य अवसर पर उसने कहा :

''हमारे देश को तीसरे स्थान से दूसरे स्थान के लिए तथा फिर प्रथम स्थान के लिए आगे बढ़ना है और तब उसको विश्व के सभी देशों में प्रथम स्थान को प्राप्त करने के लिए आगे बढ़ना है।''

इस तरह की भावनाओं का परिणाम यह हुआ कि स्कूल के पाठ्यक्रमों में नैतिक शिक्षा को प्राथमिकता दी गई।

अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए जिन नार्मल स्कूलों को खोला गया, उनको इस तरह से योजनाबद्ध किया गया था कि वे अध्यापकों को विद्यार्थियों के लिए आज्ञाकारिता, समर्पण देश-प्रेम, सम्राट के प्रति वफादारी एवं भक्ति में एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। एक सेवा निवृत्त सैनिक अधिकारी को उनमें मानसिक एवं शारीरिक अनुशासन पैदा करने के लिए रखा जाता था।

मेजी शासन के दौरान शिक्षा में जिन दोहरे उद्देश्यों को प्रोत्साहित किया गया वे इस प्रकार थे : ''देश-प्रेम एवं वफ़ादारी और इंजीनियरों, मैनेजरों तथा वित्त अधिकारियों आदि के एक नए वर्ग को तैयार करना।''

जनता में राष्ट्रवादी भावना को और गहरा बनाने के लिए शिक्षा का एक औजार के रूप में इस्तेमाल किया गया। 1937 में चीन के साथ दूसरे युद्ध के बाद संपूर्ण देश को युद्ध की स्थिति में रखा गया। इसके फलस्वरूप युद्ध के समय देश की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए शिक्षा कोंसिल के द्वारा व्यवस्था में कुछ परिवर्तनों का सुझाव दिया गया। प्राथमिक स्कूलों का नाम बदलकर ''राष्ट्रीय स्कूल'' कर दिया गया। इसका उद्देश्य जनता को ''जापानी साम्राज्य के उन नैतिक सिद्धांतों के अनुरूप प्रशिक्षित करना था, जिनका तात्पर्य जनता को सम्राट के प्रति वफादार बनाना था।''

जैसे-जैसे जापान युद्ध की गहराई में धंसता गया, वैसे-वैसे शिक्षा में राष्ट्रवादी तत्व और अधिक बढ़ता गया। 1941 के शैक्षिक सुधार तथा 1943 में शिक्षा मंत्रालय द्वारा जारी की गई माध्यम संबंधी नीति में युवकों को ''साम्राज्य के तरीके के अनुरूप'' प्रशिक्षित करने की ज़रूरत पर बल दिया गया। इस तरीके में ''वफादारी, निष्ठा, सुरक्षा तथा साम्राज्यिक सिंहासन की सम्पन्नता को बनाए रखने, देवताओं एवं पूर्वजों के प्रति भक्ति भाव रखने'' पर ज़ोर दिया गया था। इसके द्वारा पूर्वी-एशिया तथा विश्व में जापान के लक्ष्यों को विद्यार्थियों को समझाने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया। जापानी साहित्य, साम्राज्य की परंपराओं के ज्ञान तथा जापानी जीवन-शैली एवं संस्कृति के अध्ययन को भी प्रोत्साहित किया जाने लगा।

जापान के लक्ष्य तथा वृहत पूर्वी-एशिया के सह-समृद्धि के क्षेत्र की नीति के महत्व को जापानियों को समझाने के लिए उनको पूर्वी-एशिया के देशों के विषय में तथा वहाँ पर यूरोपीय देशों के शासन के दौरान पैदा की गई दुर्दशा के विषय में शिक्षित करना आवश्यक था। इस प्रकार से सरकार ने उस तरह से जनता के मन को तैयार किया जिस तरह से वे चाहते थे क्योंकि शिक्षा के द्वारा उन्होंने जनता के बीच राष्ट्रवादी भावनाओं को भरपूर तौर पर पैदा किया था। इस तरह के सभी विचारों का प्रसार करने में सेना ने महत्वपूर्ण योगदान किया। इसके द्वारा ऐसे राष्ट्रव्यापी भावनाओं को उभारा गया, जिन्होंने सेना के उद्देश्यों को पूरा करने में भरपूर मदद की।

11.6 विचारों एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कुठाराघात

राष्ट्रवाद की भावना को प्रोत्साहित करने के लिए उस असंतोष का दमन करना आवश्यक था, जो देश के राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तन से पैदा हुआ था।

औद्योगीकरण के कारण एक ऐसी जनसंख्या उभर कर आई, जिसमें जापान में पारिवारिक व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई। औद्योगीकृत पश्चिम से आए गए सामाजिक मूल्य और धारणाओं ने जापानी समाज में प्रवेश किया, जिसके कारण कन्फ्यूशस के सिद्धांतों पर आधारित जापानी सामाजिक व्यवस्था का आधार टूटने लगा।

विचारों तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में कटौती करने के लिए मेजी सरकार द्वारा अनेकों सुरक्षा कानूनों तथा प्रकाशन अधिनियमों को लागू किया गया। इन कानूनों के द्वारा केवल सरकार का पक्ष लेने वाले साहित्य को प्रकाशित होने की अनुमति प्रदान की गई।

1870 तथा 1880 के दशकों में जापान में जनता के अधिकारों का आदोलन व्यापक तौर पर फैला था। कैद करने, नेताओं को खरीदने तथा मनोबल तोड़ने जैसे तरीकों सहित सरकार ने इस तरह के अधिनियमों को भी बनाया, जिनके द्वारा सभा करने पर पाबंदी (1880) लगा दी गई तथा आंदोलनों को कुचलने के लिए किसी भी समाचार-पत्र को सरकार की प्राथमिक अनुमति के बिना प्रकाशित करने में (1983) रोक दिया गया। यहाँ तक कि नाटकों तथा चलचित्रों को साधारण जनता को दिखाने से पूर्व सरकार की अनुमति लेनी होती थी।

इन सभी दमनकारी उपायों के बावजूद जनता के अधिकारों को जापान में संसदात्मक सरकार स्थापित कराने में पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। लेकिन संविधान के द्वारा ''कानून की सीमाओं के अंदर'' जनता को सीमित स्वतंत्रता प्रदान की गई दी और जिसको आगामी वर्षों में पारित होने वाले कानूनों ने और सीमित कर दिया।

11.6.1 सेना का विरोध

जापान में बढ़ते सैन्यवाद के विरुद्ध प्रथम विश्व युद्ध के दौरान एवं बाद में कड़ा प्रतिवाद किया गया। सबसे अधिक संगठित एवं व्यवस्थित युद्ध-विरोधी आंदोलन समाजवादियों एवं साम्यवादियों के द्वारा चलाया गया। कई युद्ध-विरोधी लेखों के द्वारा सेना की बुराई को उजागर किया गया। कोबायाशी ताकिजी ने अपने लेख **कानी कोसेन** (कैनेरी नाव, 1929) में दिखाया कि सेना हड़ताल का कैसे दमन करती थी। कुरोशिमा देनजी द्वारा लिखित **बुसो सेरू शिनाय** (हथियारों के अधीन शहर) में साइबेरिया अभियान के दौरान सैनिकों की मुसीबतों को दर्शाया गया। इस तरह की साहित्यिक कृतियों पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया था। साम्यवादी दल पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया था, क्योंकि वह सैनिक अभियानों का जबरदस्त विरोधी था। इस दल के अनेक नेताओं को जेल की सजा दी गई और बहुत-से भूमिगत हो गए।

सेना ने राष्ट्रवादी भावनाओं का इस्तेमाल ऐसे मज़दूर वर्ग को पैदा करने के लिए किया, जो कड़ा परिश्रमी, अनुशासनिक तथा माँग न करने वाला था। यह सेना एवं पूँजीपति दोनों के लिए लाभदायक साबित हुआ।

11.6.2 1930 के बाद के अधिनियम

1930 तथा 1940 के दशकों में जैसे जापान युद्ध में शामिल होता गया, वैसे-वैसे विचारों तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कड़ा नियंत्रण कसता चला गया। विद्यमान अधिनियमों के क्षेत्रों

को विस्तृत करने के लिए उनमें संशोधन किया गया। 1925 में शांति बनाए रखने के लिए पारित किए गए अधिनियम को 1928 में एक विशेष शाही अध्यादेश के द्वारा संशोधित कर दिया गया। इस अधिनियम को पुनः 1941 में संशोधित किया गया जिससे कि किसी भी राजनीतिक कार्यकर्ता को गिरफ्तार कर उसे अनिश्चित समय के लिए जेल में रखा जा सके।

1941 के राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के साथ-साथ दूसरे प्रतिबंधित अधिनियमों को बनाया गया। इनके अनुसार लायजन सम्मेलन तथा मंत्रिमंडल की बैठकों में हुई बहस को ''अति गुप्त'' रखा जाना था। जो कोई भी इनसे संबंधित सूचना प्राप्त करने या देने या प्रयास करता पाया जाएगा उसको कड़ी सजा दी जाएगी। युद्ध के दौरान होने वाले अपराधों से संबंधित कानूनों में 1942 में संशोधन कर सरकारी प्रशासन में हस्तक्षेप करने को भी अपराध घोषित कर दिया गया।

युद्ध में जुड़े सवालों पर आम बहस करना या बातचीत करना विद्यमान कानूनों के कारण असंभव-सा हो गया। आम लोगों के लिए युद्ध की वास्तविकताओं को जानना भी असंभव हो गया था क्योंकि समाचार-पत्र सामान्य जनता को वही बता सकते थे, जो सरकार चाहती थी। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य न था यदि जनता सैनिक सरकार की नीतियों का समर्थन करने को बाध्य थी, बल्कि सेना के लिए बहुत-सी स्थापित देशभक्त संस्थाओं तथा संगठनों के प्रचार ने और सरल बना दिया था क्योंकि इनका अस्तित्व मेजी सरकार के समय ही बना हुआ था। इन संस्थाओं तथा संगठनों ने ''उग्र-राष्ट्रवादी'' साहित्य को तैयार किया जिसने सेना को ताकत प्रदान की। बहुत-से सैनिक अधिकारी न केवल इस तरह की संस्थाओं एवं संगठनों के सदस्य थे बल्कि उनका इनकी विचारधारा में बहुत यकीन था और वे उसको लागू करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। इनमें अधिकतर नौजवान अधिकारी थे। अधिकतर नौजवान अधिकारी साधारण मध्यम वर्गीय परिवारों, छोटे व्यापारियों के पुत्रों तथा कार्यालयों में बाबुओं से संबंधित थे। एक बड़ी संख्या उन ग्रामीण अंचलों से भी आती थी जहाँ पर आर्थिक संकट का गहरा प्रभाव हुआ था। इनमें से कई अधिकारियों ने शहरों में स्थित सम्पन्न धनी लोगों का विरोध भी किया था।

राष्ट्रवादी विचारधारा से प्रेरित होकर ये नौजवान अधिकारी या तो किता इक्की जैसे नेताओं के साथ हो गए थे या फिर ऐसे संगठनों के सदस्य बन गए थे, जिनमें केवल सेना एवं नौसेना के सदस्य शामिल थे। ओकावा शूमई के साथ-साथ किता इक्की ने **यूजोन्शा** (राष्ट्रीय भावनाओं को बनाए रखने के लिए संस्था) का गठन किया। ओकावा औपनिवेशीकरण अकादमी में प्रवक्ता था और इन दोनों ने संयुक्त रूप से विदेशों में सैनिक प्रसार तथा सेना के द्वारा सत्ता प्राप्त करने की वकालत की। दूसरी प्रसिद्ध संस्था **सकूराकाय** (चेरी ब्लॉसम) थी और इसकी स्थापना 1930 में लेफ्टीनेंट कर्नल हाशिमोते किंगोरो ने की थी।

मेरिंकाय (ऊंची नैतिकता की संस्था) के अंतर्गत भी सेवानिवृत्त सेना एवं नौसेना अधिकारी थे। **कोदोकाय** (साम्राज्यिक मार्ग की संस्था) की स्थापना 1933 में पूँजीवादी ढाँचे और राजनीतिक दलों को समाप्त करने के लिए की गई थी और इसने राज्य के द्वारा नियंत्रित अर्थव्यवस्था की स्थापना का समर्थन किया। इन संस्थाओं पर सैनिक अधिकारियों का वर्चस्व था और ये 1931 के मंचूरिया संकट के बाद विशेष तौर से लोकप्रिय हो गई।

1930 के वर्षों में जो अनेकों षड़यंत्र रचे गए, उनसे स्पष्ट है कि आला कमान स्वयं अपने अधिकारियों पर नियंत्रण करने में सक्षम न थी। इसका प्रथम प्रमाण मंचूरिया की वह सेना थी, जिसका इस क्षेत्र के मामलों एवं योजनाओं को बनाने पर नियंत्रण था और इसने टोकियो में उच्च अधिकारियों की पीठ पीछे कार्यवाहियों को लागू किया। सेना के नेतागण

राजधानी में आगे होने वाली घटनाओं पर अपना नियंत्रण कायम न रख सके लेकिन उन्होंने उनकी कार्यवाहियों को उचित ठहराया। छोटे अधिकारियों ने अधिनियमों को तोड़ा। सेना की जो टुकड़ियाँ विदेशों में तैनात थी उन्होंने टोकियो की नीतियों का अनुसरण नहीं किया। समय-समय पर सेना ने सर्वोच्च कमाण्डर अर्थात् सम्राट की आज्ञाओं का भी पालन नहीं किया।

बोध प्रश्न 2

1) सैन्यवाद के राष्ट्रवादी विचारों को विकसित करने में शिक्षा ने कैसे योगदान किया?

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित में से कौन-सा कथन गलत या सही है। गलत (×) या सही (√) का चिह्न लगाइए।

   i) किता इक्की ने लोकतांत्रिक सरकार का समर्थन किया।

   ii) राष्ट्रीय भावना का इस्तेमाल माँग न करने वाले अनुशासित मज़दूर वर्ग को पैदा करने के लिए किया गया।

   iii) साम्यवादियों ने सैन्यवाद का विरोध किया।

   iv) किसी सीमा तक सेना ने सरकार की शिक्षा नीति को निर्देशित किया।

   v) जिन लेखों के द्वारा सेना की बुराई को उजागर किया गया, उनको प्रोत्साहित किया गया।

11.7 सेना के अंदर विभाजन

आर्थिक एवं राजनीतिक संकट के कारण जो स्थिति पैदा हुई, उससे निपटने के लिए क्या नीति अपनाई जाए–इसे लेकर सेना उच्च स्तर पर दो खेमों में विभाजित थी। ये दोनों मुख्य गुट निम्न प्रकार से थे :

i) एक **कोदोहा** (साम्राजिक मार्गी गुट) था और इस गुट में अकारी सदाओ तथा माजाकी जिंजाबुर जैसे सेनापति शामिल थे।

ii) दूसरा गुट **तोसेई** (नियंत्रण गुट) था और इस गुट में सामान्य स्टाफ के नागाता तेत्सुजन, ताजो हिदेकी तथा इशिवारा कांजी जैसे उच्च अधिकारी शामिल थे।

कोदोहा गुट ने वफादारी तथा नैतिकता पर बल दिया और तंत्रीय परिवर्तनों में कोई विशेष योगदान न किया। **तोसई** गुट ने पूँजीवाद तथा संसदात्मक व्यवस्था का विरोध नहीं किया। इसने राज्य नियंत्रण की स्थापना एवं इसके लागू करने पर ज़ोर दिया जिससे जापान को युद्ध के लिए तैयार किया जा सके। **तोसेई** गुट को व्यापारियों, नौकरशाहों तथा बुद्धिजीवियों से समर्थन प्राप्त हुआ।

सत्ता के लिए सेना के अंदर संघर्ष काफी गंभीर था। **कोदोहा** गुट उस समय वर्चस्व की स्थिति में था, जबकि 1931 में अराकी या मंत्री एवं मजाकी उप-सेनापति बना। लेकिन मंचूरिया में तोसेई गुट का ही अधिक प्रभाव था।

1934 में अराकी ने त्याग-पत्र दे दिया तथा उसका उत्तराधिकारी हायाशि सेन्जूरो बना और सेन्जूरो धीरे-धीरे नागाता तेत्सूजान के प्रभाव में आ गया। माजाकी ने उप-सेनापति के रूप में कार्य करने के बाद सैनिक शिक्षा के डायरेक्टर जनरल का पद प्राप्त किया। लेकिन नागाता ने किसी तरह से 1935 में उसको इस पद से हटाने में सफलता प्राप्त की। बदले की भावना से काम करते हुए माजाकी समर्थकों ने आगे चलकर नागाता की हत्या कर दी। इन वर्षों के दौरान यह समझा गया कि **कोदोहा** के सदस्य लगातार समस्या पैदा करते रहते थे और इसी कारण से उनमें से अधिकतर को मंचूरिया भेज दिया गया।

लेकिन **कोदोहा** के सदस्य सत्ता पर अधिकार करने के लिए कृत-संकल्प थे। 26 फरवरी, 1936 में एक प्रयास उस समय किया गया, जबकि इस गुट के युवा अधिकारियों ने टोकियो केंद्र पर अधिकार कर लिया तथा वित्त मंत्री, प्रिवी कोंसिल के लॉर्ड एवं सैनिक इंस्पेक्टर जनरल जैसे बड़े नेताओं की हत्या कर दी गई। इन युवा सैनिक अधिकारियों ने माजाकी के अधीन एक नए तंत्र की स्थापना की माँग की। लेकिन बड़े अधिकारियों के दबाव में उन्हें अंततः आत्म-समर्पण करना पड़ा। इनमें से लगभग 13 अधिकारियों पर मुकदमा चलाया गया और उनको फांसी की सजा दे दी गई। यद्यपि किता इक्की इस घटना में प्रत्यक्ष तौर पर शामिल नहीं था, किंतु 1937 में उसे भी फाँसी दे दी गई। अराकी एवं माज़ाकी को भी हटा दिया गया। इस तरह से अधिकारियों को अलग-अलग करके **कोदोहा** की शक्ति को क्षीण कर दिया गया। उनमें कुछ का हस्तांतरण करके देश से दूर मंचूरिया भेज दिया गया। इस तरह दोनों गुटों के बीच सत्ता के लिए हुए संघर्ष में **तोसेई** गुट को विजय प्राप्त हुई। लेकिन इस आंतरिक संघर्ष के कारण सेना किसी भी तरह से कमज़ोर न हुई।

11.8 सेना की तानाशाही

मंत्रिमंडल के गठन में सेना ने जिस तरह विघ्न डाला उससे सेना की तानाशाही की अभिव्यक्ति हुई। यदि प्रधानमंत्री या मंत्रिमंडल के सदस्य के रूप में नियुक्त होने वाला नेता सेना को स्वीकार्य न था, तब सेना सेवा पद पर एक अधिकारी को नियुक्त करने से इंकार कर सकती थी। इसके कारण मंत्रिमंडल का गठन करना असंभव हो गया। जैसे-जैसे सेना का हस्तक्षेप बढ़ता गया, वैसे-वैसे राजनीतिक नेताओं के पास इसके सिवाय कोई विकल्प न रह गया था कि वे सेना की सभी बातों को मानें।

26 फरवरी 1930 की उस घटना के बाद जबकि ओकादा केसूके मंत्रिमंडल का पतन हो गया था, हिरोता कोकी को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया गया। जब तक सेना के द्वारा मंत्रिमंडल के सदस्यों के नामों का अनुमोदन नहीं कर दिया गया, तब तक वह उनको मंत्रिमंडल में शामिल न कर सका।

हिरोता मंत्रिमंडल को भी सेना ने त्याग-पत्र देने के लिए बाध्य किया। इसका कारण यह था कि डायट में हामाद कुनिमात्सू ने एक ऐसा प्रश्न किया, जिसको सेना ने अपने विरुद्ध माना। सेना ने उसके निकाले जाने की माँग की अन्यथा उसे सेना का सहयोग प्राप्त नहीं होगा।

सेना उगाकी काजूशिजे के पक्ष में भी न थी। उगाकी को न तो मंत्रिमंडल का गठन करने के लिए बुलाया गया और उसको मंत्रिमंडल में मंत्री का पद देने से भी इंकार कर दिया गया। वास्तव में सेना ने उगाकी को बड़े ही संदिग्ध तरीके से प्रधानमंत्री बनने से रोका। जिस समय उगाकी टोकियो को जा रहा था उसे उस समय सेना पुलिस के कप्तान द्वारा टोकियो की सीमा के बाहर कांगवाय मोड़ पर रोक लिया गया। उगाकी को कार में बैठा लिया गया और पुलिस कप्तान ने बताया कि युवा सैनिक अधिकारियों में काफी असंतोष

फैला हुआ है। इसलिए सेना मंत्री का आदेश है कि आप प्रधानमंत्री के पद को स्वीकार करने से इंकार कर दें। युवा सैनिक अधिकारियों की नाराज़गी का कारण यह था कि उगाकी ने 1931 में मंचूरिया के षड्यंत्र में भाग लिया था।

मई 1936 में अधिनियमों में संशोधन कर यह व्यवस्था कर दी गई कि जो अधिकारी सक्रिय रूप से कार्यरत थे, केवल वे ही सेना एवं नौसेना के मंत्री पदों को ग्रहण कर सकते थे। अब प्रधानमंत्री सेना के रिटायर्ड अधिकारियों की इस पद पर नियुक्ति नहीं कर सकता था।

राजनीतिक दलों का महत्व इस तथ्य में निहित था कि डायट में वे जनता का प्रतिनिधित्व करते थे और नीतियों के प्रति उनकी सहमति का तात्पर्य था कि जनता भी उन नीतियों का समर्थन करती थी।

अक्तूबर 1940 में राजनीतिक दलों का स्थान **तैसेई याकूसन काय** (इम्पीरियल रूल एसिटेंस एसोसिएशन) ने ले लिया। राजनीतिक दल भी इस संस्था में शामिल हो गए और राष्ट्रीय नीतियों का समर्थन करने के लिए जनमत तैयार करने की प्रतिज्ञा की। अब निर्णय लेने की प्रक्रिया में राजनीतिक दलों की भूमिका बिल्कुल ही नगण्य हो गई।

11.9 युद्ध और आर्थिक नीतियाँ

1937 में चीन के साथ युद्ध छिड़ जाने के बाद से जापान इस देश के आंतरिक मामलों में गहरी रुचि लेने लगा। युद्ध चीन के बहुत-से भागों में फैल गया और जापान को जान-माल का भारी नुकसान हुआ। महाद्वीप में जो घटनाक्रम घटित हुआ उनका प्रभाव घरेलू नीतियों पर भी हुआ। सेना ने युद्ध में व्यापक तौर पर भाग लेने के लिए देश के अंदर और अधिक तैयारियाँ की। इसके कारण आर्थिक व्यवस्था पर सरकार का नियंत्रण और बढ़ गया। अब हथियारों एवं भारी उद्योगों पर अधिक बल दिया जाने लगा।

जून 1937 में जैसे ही कोनोइ फूमिमारो ने प्रधानमंत्री का पद संभाला, वैसे ही नागरिक उड्डयन तथा तेल वितरण को सरकार के नियंत्रण में कर लिया गया। आर्थिक नीतियों में सामंजस्य स्थापित करने के लिए मंत्रिमंडल नियोजन बोर्ड का गठन किया गया।

यह भी निर्णय लिया गया कि लॉयजन सम्मेलनों का आयोजन प्रधानमंत्री, विदेश मंत्री तथा सेना एवं नौसेना मंत्रियों के बीच होगा और उसी के अंदर महत्वपूर्ण निर्णय लिए जाएंगे। इन कार्यवाहियों में अन्य मंत्री भाग न ले सकेंगे और इस तरह से सभी महत्वपूर्ण निर्णयों के विषय में मंत्रिमंडल के अन्य सदस्यगण अनभिज्ञ बने रहे।

सन् 1938 में एशिया विकास बोर्ड का गठन किया गया और इसका उत्तरदायित्व चीन से संबंधित मामलों का संचालन करना था। 1942 में निर्मित बृहत पूर्वी-एशिया मंत्रालय में एशिया विकास बोर्ड का उसी वर्ष विलय कर दिया गया।

1929 में डायट के द्वारा गतिशील कानून को पारित किया गया और इसके द्वारा श्रम, कच्चे माल आदि पर सेना के प्रभुत्व को और कड़ा कर दिया गया। ऐसे उद्योगों को प्रोत्साहित किया गया, जो युद्ध की मशीनरी का प्रसार करने में सहायक थे। मांचूकुओ प्रदेश पर सेना का पूरा नियंत्रण था और वहाँ पर भी सभी प्रयासों को कोयला, लौह एवं स्टील उद्योगों, आटोमोबाइल एवं युद्ध विमानों के निर्माण के विकास की ओर निर्देशित किया गया।

11.10 युद्ध एवं सेना का व्यवहार

जैसे-जैसे युद्ध फैलता गया, वैसे-वैसे जापान ने 1942 के मध्य से 1944 के मध्य तक अपने साम्राज्य को विकसित एवं प्रसारित करने के प्रयास किए और इसका आर्थिक तौर पर शोषण भी किया। जापान ने नवम्बर, 1941 में एक योजना का प्रारूप तैयार किया, जिसके अनुसार संपूर्ण पूर्वी-एशिया को बृहत् पूर्वी-एशिया के रूप में परिवर्तित कर जापान के साथ एक सह-सम्पन्न क्षेत्र बनाना था। चीन तथा मंचूरिया को भी अपना औद्योगिक आधार बनाना था।

यद्यपि सह-समृद्धि क्षेत्र बनाने के विचार का तात्पर्य एशिया के देशों को पश्चिमी दशों के नियंत्रण से ''मुक्त'' कराना था, किंतु जापान का मुख्य उद्देश्य इन देशों को एशिया क्षेत्र से हटाकर अपना प्रभाव कायम करना था।

मार्च, 1941 में इम्पोरियल रूल एसिसटेंस ऐसोशिऐशन ने ''बृहत पूर्वी-एशिया के सह-समृद्धि क्षेत्र की मूल अवधारणाओं'' को प्रकाशित करते हुए कहा, ''यद्यपि हमने ''एशियाई सहयोग'' शब्द का प्रयोग किया है, लेकिन इससे इस वास्तविकता को नहीं भुलाया जा सकता है कि जापान को ईश्वर के द्वारा स्वतःजातीय समानता के लिए बनाया गया है।'' इसका तात्पर्य यह था कि समानता के बावजूद कुछ एशियावासी (जैसे जापान) दूसरों की अपेक्षा श्रेष्ठतर थे।

जापान ने 7 दिसम्बर, 1941 को पर्ल हार्बर पर आक्रमण किया और संयुक्त राज्य अमेरिका पर शीघ्रता के साथ विजय दर्ज की। इसके बाद जापान ने शीघ्रता से दक्षिण-पूर्वी एशिया तथा प्रशान्त महासागर के क्षेत्रों पर अपना शासन कायम कर लिया।

जिन देशों पर जापान ने युद्ध के दौरान अधिकार कर लिया था उनके साथ सेना का व्यवहार काफी असभ्य रहा। इन क्षेत्रों में जापानी सेनाओं ने जो ज्यादतियाँ की, उनमें नृशंसता, लूट, बलात्कार तथा हत्या का बोलबाला था।

कोरिया तथा ताइवान जैसे देशों पर जापान के लम्बे शासन काल में इन देशों की जनता के साथ जापान ने दूसरे दर्जे के नागरिकों जैसा व्यवहार किया। सम्मिश्रण की एक कठोर नीति को लागू किया गया, जिसके अनुसार इन देशों की जनता को जापानी भाषा सीखने तथा जापानी नामों को अपनाने के लिए बाध्य किया गया।

जैसे-जैसे युद्ध आगे बढ़ता गया, वैसे-वैसे जापान को लड़ाकू सेना तथा श्रमिकों की और अधिक आवश्यकता होने लगी। कोरियाई लोगों को कल-कारखानों में काम करने के लिए लाया गया। ऐसे विशेष कानूनों को लागू किया गया, जिससे वे लोग बाध्य होकर जापानी सेना में शामिल हो जाएँ।

मलाया, फिलीपीन्स, बर्मा, इण्डोनेशिया, वियतनाम, कम्बोडिया एवं लाओस जैसे दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों ने जापानी शासन का विरोध यूरोपीय शासकों से अधिक किया। इस असंतोष के निम्नलिखित कारण थे :

- जापानियों ने अपनी जातीय श्रेष्ठता की मान्यताओं के कारण विजित देशों की स्थानीय रीतियों एवं लोगों का अपमान किया,
- राजनीतिक अधिकारों में कटौती की, और
- उन देशों की अर्थव्यवस्था को नष्ट किया और उनमें जापान की ज़रूरतों के मुताबिक परिवर्तन किया।

प्रारंभ में बर्मा, इण्डोनेशिया तथा फ्रेंच इण्डो चीन जैसे देशों ने जापानियों को अपना ''मुक्तिदाता'' समझा। उन्होंने जापान को एशिया की ऐसी प्रथम शक्ति माना, जिसने 1904-05 के रूस-जापान युद्ध के दौरान एक यूरोपीय शक्ति को पराजित किया और उनके दिमागों में उसी जापान की याद अभी तक तरोताजा दी। लेकिन जापान के वास्तविक रूप को समझने में उन्हें अधिक समय न लगा और वे जापानियों तथा सेना द्वारा थोपे गए शासन से घृणा करने लगे। शीघ्र ही इन देशों में जापान के विरोध में एक संगठित एवं व्यापक आंदोलन का उद्भव हुआ।

बोध प्रश्न 3

1) जापानी सेना में कौन-से गुट थे तथा उनके दृष्टिकोण क्या थे?

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़ें तथा सही (√) और गलत (X) के चिह्न लगाएँ।

   i) 1940 के दशक के प्रारंभ में राजनीतिक पार्टियों ने नीति-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

   iii) सेना के दबाव के कारण अधिक धन का इस्तेमाल हथियारों के उत्पादन में किया गया।

   iii) मांचूकाओ के आर्थिक संसाधनों का इस्तेमाल युद्ध उद्योगों के प्रसार के लिए किया गया।

   iv) जापान द्वारा जीते गये देशों में सेना का व्यवहार काफी अच्छा था।

11.11 सारांश

1930 के बाद सेना के स्थापित होने वाले वर्चस्व एव सत्ता की जड़ें वास्तव में संविधान में ही निहित थी।

जिन मेजी शासकों को ''उदार'' समझा जाता था, वे वास्तव में काफी अनुदार थे और वे एक सीमा से आगे जनता को शक्ति देने के लिए तैयार न थे। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि जिस लोकतांत्रिक व्यवस्था को 1889 में लागू किया गया था, उसके अंतर्गत जन प्रतिनिधियों के पास बहुत सीमित अधिकार थे। हम देख चुके हैं कि सेना ने किसी तरह से मंत्रिमंडलों को सत्ता से हटाकर अपने प्रभुत्व को कायम किया।

सैन्यवाद के उदय के लिए यहाँ पर प्रारभ में ही पृष्ठभूमि तैयार थी। मेजी शासकों ने प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व विदेशों में प्रसारबादी नीति को लागू करने की रूपरेखा को तैयार का लिया था। घरेलू मोर्चे पर भी कई सारे अधिनियमों को लागू करके संचार माध्यमों पर नियंत्रण किया गया और एक बिन्दु से परे किसी भी प्रकार असहमति को सहन नहीं किया गया। बड़े राजनेताओं की उपस्थिति के कारण सेना पर नियंत्रण बनाए रखा जा सका।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद आर्थिक संकट को हल करने तथा देश के अंदर राजनीतिक स्थायित्व स्थापित करने के लिए राजनीतिक दलों को अवसर प्रदान किया गया। लेकिन

जहाँ तक सेना का संबध था, उसपर नियंत्रण करने में राजनीतिक दल असफल रहे। सेना ने राजनीतिक दलों के प्रति कोई मित्रता नहीं दिखाई क्योंकि इन दलों को सशस्त्र सेनाओं के विकास में बाधक समझा जाता था।

राष्ट्रवाद का इस्तेमाल प्रसार की नीति तथा सैनिक शासन के औचित्य को सिद्ध करने के लिए किया गया। कुछ राजनीतिक संगठनों एवं शिक्षा नीति ने जनता के बीच इस तरह की भावनाओं को उभारने में महत्वपूर्ण योगदान किया।

यद्यपि सेना के बीच गुटबंदी थी, लेकिन सेना के मध्य होने वाले आंतरिक संघर्ष ने किसी भी तरह से राजनीति एवं प्रशासन पर उसके नियंत्रण को कमज़ोर नहीं किया। आर्थिक संसाधनों को उस युद्ध तंत्र को बनाने की ओर मोड़ दिया गया, जिसको द्वितीय विश्व युद्ध में जापान की पराजय के बाद ही तोड़ा जा सका।

11.12 शब्दावली

मांचूकाओ : जापान ने मंचूरिया पर अधिकार करने के बाद उसका नामकरण मंचूको कर दिया था।

सैन्यवाद : इस व्यवस्था के अंतर्गत देश के आंतरिक प्रशासन एवं देश की विदेशी मामलों में सेना के द्वारा निर्णायक भूमिका अदा की जाती है।

देशभक्त संस्थाएँ : देशभक्त संस्थाओं की स्थापना राष्ट्रवादी विचारों को फैलाने के लिए की गई थी। अन्य बातों के साथ-साथ उन्होंने प्रसारवादी नीतियों समर्थन किया।

उग्र राष्ट्रवाद : अत्यंत उग्र देश-प्रेम की भावना।

11.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आप अपने उत्तर का आधार भाग 11.2 को बनाएँ। जापान की स्थिति की तुलना जर्मनी एवं इटली के साथ करें।

2) बहुत-से कारण थे, जैसे कि राजनीतिक दलों के विरोध में वृद्धि, सेना के बजट में बढ़ोत्तरी होना, सेना के आकार में कमी आदि। सैन्यवादियों ने सोचा कि जापान विदेशी नीति में विनम्रता की नीति का अनुसरण कर रहा था। देखें भाग 11.4

बोध प्रश्न 2

1) भाग 11.5 देखें।

2) (i) × (ii) √ (iii) √ (iv) √ (v) ×

बोध प्रश्न 3

1) **कोदोहा** तथा **तोसेई** जैसे गुटों एवं उनके दृष्टिकोणों को उद्धृत करें। भाग 11.7 देखें।

2) (i) × (ii) √ (iii) √ (iv) ×